2. जयशंकर प्रसाद के जीवन और साहित्य पर प्रकाश डालते हुए उनके साहित्यिक अवदान पर विचार कीजिए। (15)

अथवा

जयशंकर प्रसाद के काव्य में प्रेम और सौंदर्य-चेतना का विश्लेषण कीजिए।

3. 'मुझको न मिला रे कभी प्यार' कविता की मूल संवेदना को स्पष्ट कीजिए। (15)

अथवा

'अरी वरुणा की शांत कछार' कविता के काव्य-सौंदर्य पर प्रकाश डालिए।

4. नाटक के तत्वों के आधार पर 'स्कंदगुप्त' की समीक्षा कीजिए। (15)

अथवा

'स्कंदगुप्त' नाटक को भारतीय संस्कृति और गौरव का प्रतीक क्यों कहा जाता है? स्पष्ट कीजिए।

5. 'मधुआ' कहानी की मूल संवेदना को स्पष्ट कीजिए। (15)

अथवा

जयशंकर प्रसाद के निबंध 'काव्य और कला' में प्रस्तुत विचारों का सार लिखिए।

[This question paper contains 4 printed pages.]

Your Roll No.....

Sr. No. of Question Paper : 10052 **K**

Unique Paper Code : 2053100018

Name of the Paper : Jaishankar Prasad

Name of the Course : **BA (HONS.) HINDI**

Semester : VII

Duration : 3 Hours Maximum Marks : 90

छात्रों के लिए निर्देश

1. इस प्रश्न-पत्र के मिलते ही ऊपर दिए गए निर्धारित स्थान पर अपना अनुक्रमांक लिखिए ।
2. **सभी** प्रश्न अनिवार्य हैं ।

1. निम्नलिखित अंशों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए- (10+10+10=30)

(क) छोड़कर जीवन के अतिवाद, मध्य पथ से लो सुगति सुधार।
दुःख का समुदय उसका नाश, तुम्हारे कर्मों का व्यापार।
विश्व-मानवता का जय घोष, यहीं पर हुआ जलद-स्वर-मंद्र।
मिला था वह पावन आदेश, आज भी साक्षी हैं रवि-चंद्र।

अथवा

अरुण करुण बिम्ब!
वह निर्धूम भस्म रहित ज्वलन पिंड!
विकल विवर्तनों से
विरल प्रवर्तनों में
श्रमित नमित सा -
पश्चिम के व्योम में है आज निरवलम्ब सा।
आहुतियाँ विश्व की अजस्र से लुटाता रहा -
सतत सहस्र कर माला से -
तेज ओज बल जो वदान्यता कदम्ब-सा।

(ख) युवराज! सम्पूर्ण संसार कर्मण्य वीरों की चित्रशाला है। वीरत्व एक स्वावलम्बी गुण है। प्राणियों का विकास सम्भवत: इसी विचार के उर्जित होने से हुआ है। जीवन में वही तो विजयी होता है जो दिन-रात 'युद्धस्व विगतज्वर:' का शंखनाद सुना करता है।

अथवा

देवि! यह न कहो। जीवन के शेष दिन, कर्म के अवसाद में बचे हुए दुखी लोग, एक दूसरे का मुँह देखकर काट लेंगे। हमने अन्तर की प्रेरणा से शस्त्र द्वारा जो निष्ठुरता की थी, वह इस पृथ्वी को स्वर्ग बनाने के लिए। परन्तु इस नन्दन की वसन्तश्री, इस अमरावती की शची, स्वर्ग की लक्ष्मी तुम चली जाओ-ऐसा मैं किस मुँह से कहूँ? (कुछ ठहर कर सोचते हुए) और किस वज्र कठोर हृदय से तुम्हें रोकूँ? देवसेना!
देवसेना!! तुम जाओ। हतभाग्य स्कन्दगुप्त, अकेला स्कंद, ओह!!

(ग) रंगमंच की बाध्य-बाधकता का जब हम विचार करते हैं, तो उसके इतिहास से यह प्रकट होता है कि काव्यों के अनुसार प्राचीन रंगमंच विकसित हुए और रंगमंचों की नियमानुकूलता मानने के लिए काव्य बाधित नहीं हुए। अर्थात् रंगमंचों को ही काव्य के अनुसार अपना विस्तार करना पड़ा और यह प्रत्येक काल में माना जाएगा कि काव्यों के अथवा नाटकों के लिए ही रंगमंच होते हैं। काव्यों की सुविधा जुटाना रंगमंच का काम है। क्योंकि रसानुभूति के अनन्त प्रकार नियमनबद्ध उपायों से नहीं प्रदर्शित किये जा सकते और रंगमंच ने सुविधानुसार काव्यों के अनुकूल समय-समय पर अपना स्वच्छ परिवर्तन किया है।

अथवा

एक चिन्तापूर्ण आलोक में आज पहले पहल शराबी ने आँख खोलकर कोठरी में बिखरी हुई दारिद्रय की विभूति को देखा और देखा उस घुटनों से ठुड्डी लगाये हुए निरीह बालक को; उसने तिलमिलाकर मन-ही-मन प्रश्न किया-किसने ऐसे सुकुमार फूल को कष्ट देने के लिए निर्दयता की सृष्टि की? आह री नियति! तब इसको लेकर मुझे घर-बारी बनना पड़ेगा क्या? दुर्भाग्य! जिसे मैंने कभी सोचा भी न था। मेरी इतनी माया-ममता-जिस पर, आज तक केवल बोतल का ही पूरा अधिकार था-इसका पक्ष क्यों लेने लगी? इस छोटे-से पाजी ने मेरे जीवन के लिए कौन-सा इन्द्रजाल रचने का बीड़ा उठाया है? तब क्या करूँ? कोई काम करूँ? कैसे दोनों का पेट चलेगा?